Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
March 2024 5(3), 524–530

HISTORICAL BACKGROUND OF SHADGUNYA

षाड्गुण्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

Dr. Dipika Sharma [1]

[1] Assistant Professor, Delhi University

DOI
10.29121/shodhkosh.v5.i3.2024.2388

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2024 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

OPEN ACCESS

ABSTRACT

English: Ancient Indian thinkers have discussed various topics related to political science in a comprehensive and subtle way. Shadgunya is an ancient Indian concept, which means a collection of six qualities. This concept is found in various philosophies and religions, such as Hinduism, Buddhism, and Jainism. Shadgunya originated in ancient India. At that time, this concept was found in the Vedas and Upanishads. In the Vedas, Shadgunya was known as "Shadripu", which means six enemies (lust, anger, greed, attachment, ego, and envy). In the Upanishads, Shadgunya was known as "Shadvikas", which means six developments (dhyana, prajna, virya, kshaanti, shiil, and santosh).

Hindi: प्राचीन भारतीय चिन्तकों ने राजनीतिशास्त्र से सम्बद्ध विविध विषयों का सांगोपांग एवं अतिसूक्ष्य दृष्टि से विवेचन किया है। षाड्गुण्य एक प्राचीन भारतीय अवधारणा है, जिसका अर्थ है छह गुणों का संग्रह। यह अवधारणा विभिन्न दर्शनों और धर्मों में पाई जाती है, जैसे कि हिंदू धर्म, बौद्ध धर्म, और जैन धर्म। षाड्गुण्य की उत्पत्ति प्राचीन भारत में हुई थी। उस समय, यह अवधारणा वेदों और उपनिषदों में पाई जाती थी। वेदों में, षाड्गुण्य को "षड्रिपु" के रूप में जाना जाता था, जिसका अर्थ है छह शत्रु (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, और मत्सर)। उपनिषदों में, षाड्गुण्य को "षड्विकास" के रूप में जाना जाता था, जिसका अर्थ है छह विकास (ध्यान, प्रज्ञा, वीर्य, क्षांति, शील, और संतोष)।

1. प्रस्तावना

रामायण, महाभारत, विविध पुराणों में तो राजनीति के तत्त्व प्राप्त होते ही हैं. किन्तु राजनीति-तत्त्वों के आधार पर अनेक प्राचीन ऋषियों और चिन्तकों ने अलग से शास्त्रीय ग्रंथों की भी रचना की है। इसमें विस्तार से राजनीति शास्त्र के विविध तत्त्वों का विवेचन हमें प्राप्त होता है। राजनीति-तत्त्वों में षाड्गुण्य प्राचीन भारतीय चिन्तकों का एक अति महत्वपूर्ण विवेचन विषय रहा है।

उनके अनुसार राजा को अपनेकर्म की सफलता के लिए सर्वदा षाड्गुण्य के विषय में चिता करनी चाहिए। यद्यपि षाड्गुण्य के विषय में अनेकों शास्त्रकारों ने अपने शास्त्र में बहुत कुछ लिखा है तथापि उनके मतों में मतपार्थक्य नहीं दिखता है। सभी आचार्यों ने एक मत से सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव एवं संश्रय या समाश्रय षाड्गुण्य के इन छः भेदों को स्वीकारा है।

रामायण के अनुसार

अयोध्याकाण्ड के सौंवे अध्याय में श्रीरामचन्द्रजी भरत से कहते हैं कि षाड्गुण्य की उपयुक्तता अनुपयुक्तता को ठीक तरह जानकर ठीक-ठीक उचित जगहों में उनका प्रयोग करो। बाल्मीकि रामायण में हमें मूलतः सन्धि और विग्रह दो प्रकार का ही वर्णन देखने को मिलता है।

इन्द्रियाणां जयं बुद्ध्वा षाड्गुण्यं दैवमानुषम्।

कृत्यं विंशतिवर्ग च तथा प्रकृतिमण्डलम् ।।

यात्रा दण्डविधानं च द्वियोनी सन्धिविग्रहो। कञ्चिदेतान् महाप्राज्ञ यथावदनुमन्यसे ।।

- अयोध्याकाण्ड, 100वां सर्ग, 69.70 श्लोक

आसन योनि-विग्रह हैं। अर्थात् प्रथम दो द्वैधीभाव और समाश्रय योनि-संधि हैं और यान सन्धि मूलक हैं और अंतिम दो विग्रह मूलक हैं।

महाभारत के अनुसार

शान्तिपर्व में पितामह भीष्म युधिष्ठिर को कहते हैं कि राजनीति के छः गुण होते हैं- सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और समाश्रय। राजा को इन सबके गुण-दोष पर सदा ध्यान रखना चाहिए।

1. सन्धि शत्रु यदि अपने से शक्तिशाली हो, तो उससे मेल कर लेना सन्धि कहलाता है। यह तीन प्रकार का होता है-

सन्धिश्च त्रिविधाभिख्यो हीनमध्यस्तथोत्तमः।

भयसत्कारवित्ताख्यः कात्स्येंन परिवर्णितः ।। म.भा. 12.59.37

भय के कारण की गयी सन्धि हीन सन्धि, सत्कार के कारण की गयी सन्धि मध्यम सन्धि और वित्त-ग्रहण द्वारा की गयी सन्धि उत्तम सन्धि कहलाती है।

2. विग्रह- यदि दोनों पक्ष समान शक्तिशाली हों, तो युद्ध जारी रखना विग्रह कहलाता है। यह दो प्रकार का होता है- स्वयं किसी शत्रु पर आक्रमण करना या अपने मित्र पक्ष पर आक्रमण होने पर उस मित्र की रक्षा के लिए आक्रमणकारी पर आक्रमण करना। इसके संबंध में कहा गया है-

एवं मे वर्तमानस्य स्वसु तेष्वितरेषु च।

भेदो न भविता लोके भेदमूलो हि विग्रहः ।। म.भा., 2.4.28

3. यान- शत्रु यदि दुर्बल हो तो उस अवस्था में उस पर आक्रमण करना यान कहलाता है।

4. आसन शत्रु की ओर से आक्रमण होने पर अपने को दुर्ग आदि में छिपाये रखना आसन कहलाता है।

5. द्वैधीभाव- शत्रु यदि मध्य श्रेणी का हो, तो द्वैधीभाव का आश्रय लेना चाहिए अर्थात् ऊपर से कुछ और व्यवहार तथा भीतर से कुछ और व्यवहार। जैसे आधी सेना को आत्मरक्षार्थ अपने पास रखना और शेष के द्वारा अन्नादि भंडार पर आक्रमण कर देना आदि।

6- समाश्रय- यदि कोई प्रबल शत्रु अपने ऊपर चढ़ाई कर दे और उसका प्रतिकार करने में असमर्थ समझने पर आक्रमणकारी से भी प्रबल राजा का आश्रय लेकर आत्मरक्षा करना समाश्रय कहलाता है-

उच्छ्रितानाश्रयेत् स्फीतान्नरेन्द्रानचलोपमान्। श्रयेच्छायामविज्ञातां गुप्तं शरणमाश्रयेत् ।। म.भा., 12.120.12

शुक्रनीति के अनुसार

आचार्य के अनुसार सन्धि, विग्रह, यान, आसन, समाश्रय और द्वैधीभाव इन छः मंत्रों के गुणों का बोध राजा को हाना चाहिए-

सन्धिं च विग्रहं यानमासनं च समाश्रयम्।

द्वैधीभावं च संविद्यान्मंत्रस्यैतांस्तु षड्गुणान्।। शुक्रनीति, 4.7.234 1. सन्धि- अतिशक्तिशाली शत्रु भी जिस काम से मित्र बन जाय, उसे सन्धि कहते हैं-

याभिः क्रियाभिर्बलवान् मित्रतां याति वै रिपुः।

सा क्रिया सन्धिरित्युक्ता विमृशेत् तां तु यत्नतः।। शुक्रनीति,4.7

2. 4.7.239 2.

2. विग्रह- जिस काम से शत्रु पीड़ित होकर अधीनता कबूल कर ले, उसे विग्रह कहते हैं-

विकर्षितः सन् वाधीनो भवेच्छत्रुस्तु येन वै। कर्मणा विग्रहस्तं तु चिन्तयेन्मन्त्रिभिर्नृपः।। शुक्रनीति, 4.7.236 साथ ही, जो राजा विपत्ति में घिरकर दूसरों से पीड़ित होते हुए भी पुनः यदि अपना अभ्युदय चाहता है तो देश, काल और उपयुक्त बल मिलते ही युद्ध प्रारंभ कर देना चाहिए। कमजोर सैन्यबल वाले दुर्बल राजा को प्रबल शक्तिशाली वीर राजा के साथ युद्ध बिल्कुल नहीं करना चाहिए।

3. यान- अपनी मनोवांछित वस्तु की सिद्धि के लिए तथा शत्रुओं के विनाशार्थ चढ़ाई को यात कहते हैं-

शत्रुनाशार्थगमनं यानं स्वाभीष्टसिद्धये। शुक्रनीति, 4.7.237

आंख की तरह राजा दोनों ओर काम करे।

यान पांच प्रकार का होता है- विगृह्ययान, संधाययान, संभूययान, प्रसङ्गयान तथा उपेक्षायान विगृह्य सन्धाय तथा सम्भूयाथ प्रसङ्गत। उपेक्षया च निपुणैर्यानं पञ्चविधं स्मृतम् ।।

4. आसन-स्वरक्षणं शत्रुनाशो भवेत् स्थानात् तदासनम्। शुक्रनीति, 4.7.237 जहां पड़े रहने से आत्मरक्षा एवं शत्रु विनाश की संभावना हो, उसे आसन कहते हैं। जहां से शत्रु सेना पर तोप, गोली आदि चलाकर उसे छिन्न-भिन्न किया जा सके, वहां सेना के साथ राजा के टिकने को आसन कहते हैं।

साथ ही, घास, अनाज, पानी, प्रकृति, आवश्यक सामग्री तथा शत्रुसेना के लिए अन्य उपयोगी वस्तुओं को घेरा डालकर बहुत दिनों तक चारो ओर से राजा के द्वारा रोककर शत्रु सेना तक न पहुंचने देना आदि कार्य आसन द्वारा संभव है-

यन्त्रास्त्रैः शत्रुसेनाया भेदो येभ्यः प्रजायते। स्थलेभ्यस्तेषु सन्तिष्ठेत् ससैन्यो ह्यासनं हि तत् ।। तृणान्नजलसम्भारा ये चान्ये शत्रुपोषकाः ।शुक्रनीति, 4.7.255

स्वरक्षणं शत्रुनाशो भवेत् स्थानात् तदासनम्। शुक्रनीति, 4.7.237 जहां पड़े रहने से आत्मरक्षा एवं शत्रु-विनाश की संभावना हो, उसे आसन कहते हैं। जहां से शत्रु सेना पर तोप, गोली आदि चलाकर उसे छिन्न-भिन्न किया जा सके, वहां सेना के साथ राजा के टिकने को आसन कहते हैं। साथ ही, घास, अनाज, पानी, प्रकृति, आवश्यक सामग्री तथा शत्रुसेना के लिए अन्य उपयोगी वस्तुओं को घेरा डालकर बहुत दिनों तक चारो ओर से राजा के द्वारा रोककर शत्रु सेना तक न पहुंचने देना आदि कार्य आसन द्वारा संभव है- यन्त्रास्त्रैः शत्रुसेनाया भेदो येभ्यः प्रजायते

स्थलेभ्यस्तेषु सन्तिष्ठेत् ससैन्यो ह्यासनं हि तत्।।

तृणान्नजलसम्भारा ये चान्ये शत्रुपोषकाः।

सम्यनिरुध्य तान् यत्नात् परितश्चिरमासनात् ।। शुक्रनीति, 4.7.285-286 5.

द्वैधीभाव- अपनी सेना को टुकड़ियों में बांटकर रखने की स्थिति को द्वैधीभाव कहते हैं- द्वैधीभावः स्वसैन्यानां स्थापनं गुल्मगुल्मतः

। शुक्रनीति, 4.7.238 समयानुसार कार्य करने वाला राजा शत्रुसंकट से बचने का जब तक कोई उपाय निश्चित न कर ले, तब तक कौवे की एक आंख की तरह अलक्षित होता हुआ व्यवहार करे- अनिश्चितोपायकार्य्यः समयानुचरो नृपः।

द्वैधीभाव वत्तेत काकाक्षिवदलक्षितम्।।

प्रदर्शयेदन्यकार्यमन्यमालम्बयेच्च वा।।

शुक्रनीति, 4.7.291 6.

आश्रय- शक्तिहीन जिस शक्तिशाली की शरण में जाकर शक्तिसम्पन्न बन जाता है. उस प्रबल राजा को आश्रय कहते हैं-

यैर्गुप्तो बलवान भूयाद् दुर्बलोऽपि स आश्रयः। शुक्रनीति, 4.7.238 जब किसी शक्तिशाली राजा द्वारा राज्य विनष्ट की स्थिति में आ जाए तो किसी कुलीन, दृढ़- प्रतिज्ञ, शक्तिशाली अन्य राजा की शरण लेनी चाहिए।

उच्छिद्यमानो बलिना निरूपाय प्रतिक्रियः।

कुलोद्भवं सत्यमार्य्यमाश्रयेत बलोत्कटम् ।। शुक्रनीति, 4.7.289

साथ ही, बलवान् शत्रु से आक्रमित होकर विपत्ति में घिरा प्रतिकार शून्य असहाय राजा को अपने अच्छे समय की प्रतीक्षा करते हुए उससे सन्धि कर लेनी चाहिए-

बलीयसाभियुक्तस्तु नृपोऽनन्यप्रतिक्रियः।

आपन्नः सन्धिन्विच्छेत् कुर्वाणः कालयापनम् ।। शुक्रनीति, 4.7.239

2. विग्रह- जिस काम से शत्रु पीड़ित होकर अधीनता कबूल कर ले, उसे विग्रह कहते हैं

विकर्षितः सन् वाघीनो भवेच्छत्रुस्तु येन वै।

कर्मणा विग्रहस्तं तु चिन्तयेन्मन्त्रिभिर्नृपः।। शुक्रनीति, 4.7.236

साथ ही, जो राजा विपत्ति में घिरकर दूसरों से पीड़ित होते हुए भी पुनः यदि अपना अभ्युदय चाहता है तो देश, काल और उपयुक्त बल मिलते ही युद्ध प्रारंभ कर देना चाहिए। कमजोर सैन्यबल वाले दुर्बल राजा को प्रबल शक्तिशाली वीर राजा के साथ युद्ध बिल्कुल नहीं करना

चहिए।

बलीयसात्यल्पबलः शूरेण न च विग्रहम्।

कुर्य्याद्धि विग्रहे पुंसां सर्वनाशः प्रजायते ।। शुक्रनीति, 4.7.253

3. यान- अपनी मनोवांछित वस्तु की सिद्धि के लिए तथा शत्रुओं के विनाशार्थ चढ़ाई को यान कहते हैं-

शत्रुनाशार्थगमनं यानं स्वाभीष्टसिद्धये। शुक्रनीति, 4.7.237 आंख की तरह राजा दोनों ओर काम करे।

यान पांच प्रकार का होता है- विगृह्ययान, संधाययान, संभूययान, प्रसङ्गयान तथा उपेक्षायान- विगृह्य सन्धाय तथा सम्भूयाथ प्रसङ्गत। उपेक्षया च निपुणैर्यानं पञ्चविधं स्मृतम् ।। शुक्रनीति, 4.7.255

4. आसन-

स्वरक्षणं शत्रुनाशो भवेत् स्थानात् तदासनम्। शुक्रनीति, 4.7.237 जहां पड़े रहने से आत्मरक्षा एवं शत्रु-विनाश की संभावना हो, उसे आसन कहते हैं। जहां से शत्रु सेना पर तोप, गोली आदि चलाकर उसे छिन्न-भिन्न किया जा सके, वहां सेना के साथ राजा के टिकने को आसन कहते हैं। साथ ही, घास,

अनाज, पानी, प्रकृति, आवश्यक सामग्री तथा शत्रुसेना के लिए अन्य उपयोगी वस्तुओं को घेरा डालकर बहुत दिनों तक चारो ओर से राजा के द्वारा रोककर शत्रु सेना तक न पहुंचने देना आदि कार्य आसन द्वारा संभव है-

यन्त्रास्त्रैः शत्रुसेनाया भेदो येभ्यः प्रजायते । स्थलेभ्यस्तेषु सन्तिष्ठेत् ससैन्यो ह्यासनं हि तत् ।। तृणान्नजलसम्भारा ये चान्ये शत्रुपोषकाः।

सम्यनिरुध्य तान् यत्नात् परितश्चिरमासनात् ।। शुक्रनीति, 4.7.285-286 5.

द्वैधीभाव अपनी सेना को टुकड़ियों में बांटकर रखने की स्थिति को द्वैधीभाव कहते हैं-

द्वैधीभावः स्वसैन्यानां स्थापनं गुल्मगुल्मतः। शुक्रनीति, 4.7.238 समयानुसार कार्य करने वाला राजा शत्रुसंकट से बचने का जब तक कोई उपाय निश्चित न कर ले, तब तक कौवे की एक आंख की तरह अलक्षित होता हुआ व्यवहार करे-

अनिश्चितोपायकार्य्यः समयानुचरो नृपः।

द्वैधीभाव वत्तेत काकाक्षिवदलक्षितम् ।।

प्रदर्शयेदन्यकार्यमन्यमालम्बयेच्च वा।। शुक्रनीति, 4.7.291

6. आश्रय शक्तिहीन जिस शक्तिशाली की शरण में जाकर शक्तिसम्पन्न बन जाता है. उस प्रबल राजा को आश्रय कहते हैं-

यैर्गुप्तो बलवान भूयाद् दुर्बलोऽपि स आश्रयः। शुक्रनीति, 4.7.238 जब किसी शक्तिशाली राजा द्वारा राज्य विनष्ट की स्थिति में आ जाए तो किसी कुलीन, दृढ़- प्रतिज्ञ, शक्तिशाली अन्य राजा की शरण लेनी चाहिए। उच्छिद्यमानो बलिना निरूपाय प्रतिक्रियः।

कुलोद्भवं सत्यमार्य्यमाश्रयेत बलोत्कटम्।। शुक्रनीति, 4.7.289

कामन्दक नीतिसार के अनुसार

आचार्य ने षाड्गुण्य के अन्तर्गत सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव एवं समाश्रय की गणना की है।

1. सन्धि- शत्रु के द्वारा आक्रमण करने पर तथा उस समय अपनी शक्ति क्षीण होने की स्थिति में स्वशक्तिपूरणार्थ कालयापन के उद्देश्य से सन्धि करनी चाहिए-

बलिना विगृहीतः सन् नृपोऽनन्यप्रतिक्रियः।

आपन्नः सन्धिमन्विमच्छेत् कुर्वाणः कालयापनम् ।। का. नीतिसार, 9.14.1 सन्धि के षोडश भेद माने जाते हैं- कपाल, उपहार, सन्तान, संगत, उपन्यास, प्रतीकार, संयोग, पुरुषान्तर, अदृष्टनर, आदिष्ट, आत्मामिष, उपग्रह, परिक्रयरत, परदूषण, स्कन्ध, उपनेय आदि। इसके अवान्तर भेद भी हैं।

2. विग्रह- असहिष्णु तथा शरीखव्य पीड़न आदि दुःखों से व्यथित संसार में एक-दूसरे के अपकार करने का लक्षण ही विग्रह है। आत्माभ्युदय की आकांक्षा करने वाले राजा को देश, काल, बल आदि के स्व-अनुकूल होने पर ही विग्रह करना चाहिए-

अमर्षोपगृहीतानां मन्युसन्तप्तचेतसाम्।

परस्परापकारेण पुंसां भवति विग्रहः ।।

आत्मनोऽभ्युदयाकांक्षी पीड्यमानः परेण वा।

देशकालबलोपेतः प्रारभेतैव विग्रहम् ।। का. नीतिसार, 10.15.1-2

वैर के पांच भेद हैं- सापत्न, वास्तुज, स्त्रीज, वाग्ज और स्वपराधजनित अपराध। इसके अतिरिक्त भूमि-विवाद, सीमा-विवाद, मंत्र प्रभु एवं उत्साह शक्ति के कारण उत्पन्न विवाद तथा द्वादश मण्डल के कारण उत्पन्न विवाद भी है। इस वैर को मूलतः दो भागों में विभक्त किया गया है- पैतृक और अपराधजनित-

सापत्नं वास्तुजं स्त्रीजं वाग्वाजतमपराधजम्।

वैरप्रभेदनिपुणैर्वैरं पञ्चविधं स्मृतम् ।।

जातं भूम्यपरोधेन तथा शक्तिविघातजम्।

भूम्यनन्तरजातं च मण्डलक्षोभजं तथा।।

चतुर्विधं वैरजातं बाहुदन्तिसुतोऽब्रवीत् ।। का. नीतिसार, 10.15,16-18

3. यान शत्रु से शक्तिशाली, देशकाल और बल के अपने अनुकूल होने पर तथा अमात्यादि के अपने में अनुरक्त रहने पर ही शत्रु पर आक्रमण करना यान कहलाता है-

उत्कृष्टबलवीर्यस्य विजिगीषोर्जयैषिणः।

गुणानुरक्तप्रकृतेर्यात्रा यानमिति स्मृतम्।। का. नीतिसार, 11.16.1 यान पांच प्रकार का होता है- विगृह्ययान, सन्धाययान, सम्भूययान, प्रसङ्गयान और उपेक्ष्ययान। विगृह्य सन्धाय तथा सम्भूयाथ प्रसङ्गतः।

उपेक्षा चेति निपुणैर्यानं पञ्चविधं स्मृतम् ।। का. नीतिसार, 11.16.2

4. आसन यदि शत्रु शक्तिशाली हो तो उससे विग्रह न कर उसकी उपेक्षा करना ही आसान है। यह पांच प्रकार का है- विगृह्य आसन, सन्धाय आसन, सम्भूयासन, प्रसङ्ग आसन और उपेक्षासन।

परस्परस्य सामर्थ्याविधातादासनं स्मृतम्।

अरेश्च विजिगीषोश्च तत् पञ्चविधमुच्यते।। का. नीतिसार, 10.16.12

5. द्वैधीभाव एक समय दो तरह का आचरण या व्यवहार द्वैधीभाव कहलाता है। शक्ति शत्रु द्वारा घिर जाने पर वचन से समर्पण करना, किन्तु कर्मणा विजय के लिए प्रयत्न करत ही द्वैधीभाव है। अर्थात् सेना के एक भाग को लेकर आत्मसमर्पण करना तथा दूसरे भाग द्वारा आक्रमण करना ही द्वैधीभाव कहलाता है। द्वैधीभाव का आश्रय लेने वाले राजा की दृष्टि कर की तरह होनी चाहिए। काग जिस तरह एक ही समय में अपने दक्षिण और वाम भाग हो एक साथ देखता है, उसी प्रकार राजा को भी दृष्टि रखनी चाहिए-

बलिनोद्विषतोर्मध्ये वाचात्मानं समर्पयेत्। द्वैधीभावेन वर्तेत काकाक्षिवदलक्षितः ।। का. नीतिसार, 11.12.23 द्वैधीभाव दो प्रकार का होता है- स्वतंत्र और परतंत्र।

6. संश्रय- जब किसी शक्तिशाली राजा द्वारा राज्य विनष्ट की स्थिति में आ जाय तो किसी कुलीन, दृढ़-प्रतिज्ञ शक्तिशाली अन्य राजा की शरण में जाना संश्रय या आश्रय कहलाता है

उच्छिद्यमानो बलिना निरूपाय प्रतिक्रियः।

कुलोद्गतं सत्यकार्यमाश्रयेत बलीत्कटम् ।। का. नीतिसार, 11.16.27

षाड्गुण्य के अन्तिम गुण को किसी आचार्य ने समाश्रय, तो किसी ने संश्रय, तो किसी ने आश्रय माना है, किन्तु वस्तुतः समाश्रय, संश्रय या आश्रय का यहां एक ही अर्थ में प्रयोग किया गया है। यहां केवल उपाधि भेद है। अतः इसको पृथक् पृथक् न मानकर एक ही गुण मानना चाहिए। इसके अतिरिक्त षाड्गुण्य के अन्य गुणों के उपाधि और अर्थ में भिन्न-भिन्न आचार्यों के मतों में हमे

मतपार्थक्य दृष्टिगोचर नहीं होता है।

इस प्रकार हम पाते हैं कि विभिन्न प्राचीन राजनीतिशास्त्र के ग्रंथों में षाड्गुण्य से सम्बद्ध जिन विषयों का विवेचन किया गया है. उनका समग्रतापूर्वक और सूक्ष्मतापूर्वक प्रतिपादन हुआ है। प्रतिपादित तत्वों के आलोक में जो राजा अपने राज्य का संचालन करता है, निश्चित रूप से उसका राज्य सर्वदा सुरक्षित रहेगा।

कौटिल्य के अनुसार

षाड्गुण्य के संबंध में आचार्य का मत उच्चकोटि का है। उनके अनुसार- सन्धिविग्रहासनयानसं श्रयद्वैधीभावाः षाड्गुण्यमित्याचार्याः। प्र. 98-99. अ.-1

आचार्य का कहना है कि दो राजाओं का कुछ शतों पर मेल हो जाना संधि, शत्रु का कोई अपकार करना विग्रह, उपेक्षा करना आसन, चढ़ाई करना यान, आत्मसमर्पण करना संश्रय और संधि-विग्रह दोनों से काम लेना द्वैधीभाव कहलाता है। यही छः गुण हैं-

"तत्र पणबन्धः सन्धिः, अपकारो विग्रहः, उपेक्षणमासनम्, अभ्युच्चयो यानं, परार्पणं संश्रयः, सन्धिविग्रहपादानं द्वैधीभाव इति षड्गुणाः ।।" -प्र. 98-99, अ.-1

शत्रु की तुलना में अपने को निर्बल समझने पर संधि कर लेनी चाहिए। यदि शत्रु की तुलना में स्वयं को बलवान् समझा जाय तो विग्रह कर लेना चाहिए। यदि शत्रुवल और आत्मबल में कोई अंतर न समझे तो आसन को अपना लेना चाहिए। यदि स्वयं को सर्वसम्पन्न और शक्तिशाली समझे तो चढ़ाई कर देनी चाहिए। अपने को निरा अशक्त समझने पर संश्रय से काम लेना चाहिए तथा सहायता की अपेक्षा समझे तो द्वैधीभाव का आश्रय लेना चाहिए-

परस्माद्धीयमानः सन्दधीत्। अप्युच्चीयमानो विग्रह्णीयात्। न मां परो नाहं परमूपहन्तु शक्त इत्यासीत्। गुणातिशययुक्तो यायात्। शक्तिहीनः संश्रयेत्। सहायसाध्ये कार्य

द्वैधीभाव गच्छेत्।।" -प्र. 98-99, अ.-1

रामायण के अनुसार

अयोध्याकाण्ड के सौंवे अध्याय में श्रीरामचन्द्रजी भरत से कहते हैं कि षाड्गुण्य की उपट्स्त अनुपयुक्तता को ठीक तरह जानकर ठीक-ठीक उचित जगहों में उनका प्रयोग करो। बाल्मीकि रामायण

में हमें मूलतः सन्धि और विग्रह दो प्रकार का ही वर्णन देखने को मिलता। इन्द्रियाणां जयं बुद्धवा षाड्गुण्यं दैवमानुषम्। कृत्यं विंशतिवर्गं च तथा प्रकृतिमण्डलम् ।। यात्रा दण्डविधानं च द्वियोनी सन्धिविग्रहो। कञ्चिदेतान् महाप्राज्ञ यथावद्नुमन्यसे ।।

- अयोध्याकाण्ड, 100वां सर्ग, 69.70 स्लो और आसन योनि-विग्रह हैं। अर्थात् प्रथम । द्वैधीभाव और समाश्रय योनि-संधि हैं और यान सन्धि मूलक हैं और अंतिम दो विग्रह मूलक हैं।

महाभारत के अनुसार

शान्तिपर्व में पितामह भीष्म युधिष्ठिर को कहते हैं कि राजनीति के छः गुण होते हैं- सन्नि विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और समाश्रय। राजा को इन सबके गुण-दोष पर सदा ध्यान रखा चाहिए। 1.

सन्धि शत्रु यदि अपने से शक्तिशाली हो, तो उससे मेल कर लेना सन्धि कहलाता है। तीन प्रकार का होता है-

सन्धिश्च त्रिविधाभिख्यो हीनमध्यस्तथोत्तमः ।

0भयसत्कारवित्ताख्यः कात्स्र्येन परिवर्णितः ।। -म.भा. 12.59.3।

भय के कारण की गयी सन्धि हीन सन्धि, सत्कार के कारण की गयी सन्धि मध्यम सन्धि और वित्त-ग्रहण द्वारा की गयी सन्धि उत्तम सन्धि कहलाती है।

2. विग्रह- यदि दोनों पक्ष समान शक्तिशाली हों, तो युद्ध जारी रखना विग्रह कहलाता है। यह दो प्रकार का होता है- स्वयं किसी शत्रु पर आक्रमण करना या अपने मित्र पक्ष पर आक्रमण होने पर उस मित्र की रक्षा के लिए आक्रमणकारी पर आक्रमण करना। इसके संबंध में कहा गया है-

एवं मे वर्तमानस्य स्वसु तेष्वितरेषु च।

भेदो न भविता लोके भेदमूलो हि विग्रहः ।। म.भा., 2.4.28

3. यान- शत्रु यदि दुर्बल हो तो उस अवस्था में उस पर आक्रमण करना यान कहलाता है।

4. आसन- शत्रु की ओर से आक्रमण होने पर अपने को दुर्ग आदि में छिपाये रखना आसन कहलाता है।

5. द्वैधीभाव- शत्रु यदि मध्य श्रेणी का हो, तो द्वैधीभाव का आश्रय लेना चाहिए अर्थात् ऊपर से कुछ और व्यवहार तथा भीतर से कुछ और व्यवहार। जैसे आधी सेना को आत्मरक्षार्थ अपने पास रखना और शेष के द्वारा अन्नादि भंडार पर आक्रमण कर देना आदि।

6- समाश्रय- यदि कोई प्रबल शत्रु अपने ऊपर चढ़ाई कर दे और उसका प्रतिकार करने में असमर्थ समझने पर आक्रमणकारी से भी प्रबल राजा का आश्रय लेकर आत्मरक्षा करना समाश्रय कहलाता है-

उच्छ्रितानाश्रयेत् स्फीतान्नरेन्द्रानचलोपमान्।

श्रयेच्छायामविज्ञातां गुप्तं

शरणमाश्रयेत् ।। म.भा., 12.120.12

मनुस्मृति के अनुसार

इसके राजा को सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव एवं संश्रय इन षड्गुणों का सर्वदा चिन्तन करना चाहिए। राजा को अपनी समृद्धि और शत्रु की हानि जिस गुण हो, उसी का आश्रय लेना चाहिए। आचार्य के अनुसार सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और संश्रय में सभी दो प्रकार होते है।

मध्यकाल:

मध्यकाल में, षाड्गुण्य की अवधारणा विभिन्न दर्शनों और धर्मों में विकसित हुई। बौद्ध धर्म में, षाड्गुण्य को "षडपरमिता" के रूप में जाना जाता था, जिसका अर्थ है छह परमिताएँ (दान, शील, क्षांति, वीर्य, ध्यान, और प्रज्ञा)। जैन धर्म में, षाड्गुण्य को "षडावश्यक" के रूप में जाना जाता था, जिसका अर्थ है छह आवश्यक गुण (उत्तम संयम, उत्तम तप, उत्तम त्याग, उत्तम स्वाध्याय, उत्तम संतोष, और उत्तम आत्म-निरीक्षण)।

आधुनिक काल में, षाड्गुण्य की अवधारणा विभिन्न क्षेत्रों में प्रयोग की जाती है, जैसे कि शिक्षा, मनोविज्ञान, और व्यवसाय। षाड्गुण्य के गुणों को व्यक्तिगत और सामाजिक विकास के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है।

2. निष्कर्ष

षाड्गुण्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि विभिन्न दर्शनों और धर्मों में पाई जाती है। यह अवधारणा प्राचीन काल से ही विकसित हुई है और आज भी विभिन्न क्षेत्रों में प्रयोग की जाती है। षाड्गुण्य के गुणों को व्यक्तिगत और सामाजिक विकास के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है।

CONFLICT OF INTERESTS

None.

ACKNOWLEDGMENTS

None.

REFERENCES

Ayodhya incident, 100th canto, 69.70 verses.
Manbhaan 12.59.37.
Manbhaane 2.4.28.
मन्भाने 12.120.12.
Thank you 4.7.234 1.
Shukraniti 4.7.235.
Shukraniti 4.7.235a 4.7.253.
Thank you 4.7.237.
Shukraniti 4.7.285.2865. Shukraniti 4.7.291 6. Neetisara 10.15.1.2 Nitisaara 10.15a16.18.
Policy 11.16.1.